कहानी चौरी–चौरा की

– गौतम पाण्डेय

चौरी–चौरा का नाम तो हम सबने सुना है। उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जिले में स्थित चौरी–चौरा का वर्णन प्रायः माध्यमिक कक्षाओं के इतिहास के पाठों में महत्वपूर्ण भारतीयों के संस्मरणों में तथा अन्य राष्ट्रवादी लेखों में महात्मा गांधी या स्वतंत्रता आंदोलन के एक बड़े संदर्भ में जरूर रहता है। यह जानकारी कि वहां 4 फरवरी 1922 को एक उग्र भीड़ ने एक थाने में आग लगा दी जिससे 23 पुलिस वालों की जानें गई थी, सभी को मालूम है। मगर इस जानकारी का वर्णन इस घटना से गांधीजी को हुए संताप या वेदना, उनके द्वारा इस 'अपराध' की घोर भर्त्सना तथा इसी कारण उनके वर्ष भर पुराने असहयोग आंदोलन के स्थगन के संदर्भ में ही किया जाता है।

चौरी–चौरा की घटना गांधीवादी राजनीति का, उस समय के समाज के निचले स्तर यानी किसानों, मजदूरों आदि तक पहुंच, उनकी समझ व क्रियान्वयन का एक ऐसा नमूना पेश करती है जो गांधीवादी आंदोलन की स्वीकृत धारणाओं पर प्रश्न चिह्न ही लगाती है। स्पष्ट रूप से यहां हमारा उद्देश्य अन्य राष्ट्रवादी वर्णनों की तरह चौरी–चौरा के संदर्भ में गांधीजी के सिद्धांतों की व्याख्या करना नहीं है बल्कि 4 फरवरी 1922 को चौरी–चौरा में वास्तव में जो कुछ भी हुआ उसकी तैयारी व उसके परिणामों का विवेचन करना भर है।

हालांकि गांधीजी ने स्वयं को इस घटना से बिल्कुल ही अलग कर लिया था फिर भी गांधीजी ने नाम पर संगठित हुई ग्रामीणों की एक भीड़ के अतिरिक्त उत्साह के कारण यह घटना घटी, इसलिए इस कहानी की शुरुआत उन्हीं से होती है।

असहयोग आंदोलन का बिगुल

1920 के आखिर में गांधीजी ने असहयोग आंदोलन के रूप में एक क्रांतिकारी कार्यक्रम की शुरुआत की जिसका अर्थ था उन सभी वस्तुओं, संस्थानों या व्यवस्थाओं का बहिष्कार जिसके द्वारा अंग्रेज हम पर शासन कर रहे थे। उन्होंने देश भर घूम–घूम कर विदेशी वस्तुओं (विशेषकर विदेशी वस्त्र), अंग्रेजी कानून, शिक्षा और प्रतिनिधि सभाओं के बहिष्कार का प्रचार किया। भारतीय मुसलमानों द्वारा चलाए जा रहे खिलाफत आंदोलन के साथ सम्मिलित रूप से चलाया जा रहा यह आंदोलन काफी सफल साबित हुआ था।

'राज से स्वराज' की तरफ बढ़ने की प्रक्रिया के इस दौर में कांग्रेस के पास 'स्वदेशी' और 'अहिंसा' नाम के दो बहुत ही महत्वपूर्ण अस्त्र थे। और इस पूरे आंदोलन के क्रियान्वयन व उसे सफल बनाने की जिम्मेदारी थी सत्याग्रही स्वयंसेवकों की। 1919 के रौलेट एक्ट को लेकर किए सत्याग्रह के दौरान सर्वप्रथम कांग्रेस ने सत्याग्रही स्वयंसेवकों को शामिल करना शुरू किया था। जिनका काम था सत्याग्रह को सुचारू रूप से

चलाना और कांग्रेस के कार्यक्रमों में शामिल जनसमूहों को नियंत्रित करना तथा अनुशासन बनाए रखना। इस कार्य के लिए उन्हें प्रशिक्षण भी मिलता था। स्वयंसेवक बनने के लिए किसी व्यक्ति को एक 'प्रतिज्ञा पत्र' भरना होता था जिसमें वह भगवान के नाम की सौगंध लेता था कि वह केवल खद्दर पहनेगा, अहिंसा का पालन करेगा, अपने नेताओं की आज्ञा का पालन करेगा, हिन्दू धर्म में व्याप्त जाति व्यवस्था का विरोध करेगा, सांप्रदायिक सौहार्द बनाने की कोशिश करेगा, सभी किस्म की कठिनाइयों (जेल आदि) को झेलने को तैयार रहेगा और गिरफ्तार होने पर अपने आश्रितों के लिए आर्थिक सहायता नहीं मांगेगा। ऐसी शर्तों के बावजूद उस समय राष्ट्रीयता की भावना इस कदर फैली थी कि दिसंबर 1921 तक हजारों की संख्या में लोगों ने अपने आपको स्वयं सेवक दलों में शामिल कर लिया था।

दो गांव – चौरी और चौरा

आइए अब वापस चौरी–चौरा की तरफ चलते हैं। चौरी और चौरा दो अलग–अलग गांवों के नाम थे। जिसे एक करने का काम किया था रेलवे के एक ट्रैफिक मैनेजर ने, जिसने जनवरी 1885 में वहां एक रेलवे स्टेशन की स्थापना की थी। इस तरह शुरू में रेलवे प्लेटफार्म और मालगोदाम के अलावा चौरी–चौरा नाम की कोई जगह नहीं थी। 1885 के बाद भी जो आसपास बाजार बसा वो चौरा गांव में बसा। चौरा में ही वो मशहूर थाना भी था जिसे 4 फरवरी 1922 को जलाया गया था। इस थाने की स्थापना 1857 की क्रांति के बाद की गई थी और यह तृतीय दर्जे का थाना मुकर्रर था।

यहां के बाशिंदों में 11 प्रतिशत कलवार (कलार) जाति के थे जिनका पेशा शराब बनाना और दूसरे छोटे–मोटे व्यापार करते थे। ये चौरा के अलावा पास के मुण्डेरा बाजार में भी सबसे प्रभावशाली लोग थे। यहां के करीब दो–तिहाई लोग खेती पर निर्भर थे जबकि एक–तिहाई व्यापार आदि पर। चौरा और आस–पास के बाजारों जैसे मुण्डेरा और भोपा बाजार से निर्यात की मुख्य वस्तुएं थीं– मृत जानवरों के चमड़े और हड्डियां, दाल, गेहूं, अलसी, चीनी व गुड़। जबकि मिट्टी का तेल, माचिस, कपड़े आदि आयात की मुख्य वस्तुएं थी। 1922 के शुरू में चौरा बाजार में तीन तेल की मिलें थी, एक–दो चीनी बनाने के कारखाने, चीनी और गुड़ के दो बड़े आढ़त, कपड़े की दो छोटी दुकानें और कलवारों की कुछ किराने की दुकानें भी थीं। रेलवे स्टेशन के पास 'बर्मा शेल कंपनी' का एक मिट्टी के तेल का डिपो भी था। यहीं से 4 फरवरी 1922 को दंगाइयों ने मिट्टी का

तेल लेकर थाने में आग लगाई थी। प्रत्येक मंगलवार और शुक्रवार को यहां बाजार लगता था जिसमें आसपास के गांवों के किसान और व्यापारी अपनी दुकानें लगाते थे और खरीददारी करते थे।

शनिवार को पास के भोपा बाजार में बाजार लगता था जहां चमड़े व हड्डियों का व्यापार होता था। इस दिन यहां करीब तीन से चार सौ तक लोग बाजार में रहते थे। ये व्यापार ज्यादातर मुसलमान व्यापारियों के हाथ में था जो कानपुर और कलकत्ता के बड़े बाजारों को चमड़े और हड्डियां सप्लाई करते थे।

मगर इन सबसे जो बड़ा और स्थापित बाजार था वो था मुण्डेरा का। मुण्डेरा बाजार रेलवे लाईन के दूसरी तरफ स्थित था और यहां मुख्य रूप से दाल, गुड़ और चावल के बड़े आढ़त थे। यहां की दुकानें चाहे वो किराने की हों, या कपड़े की या शराब, गांजा, भांग या मांस की, दूसरी जगहों की दुकानों से बड़ी थीं। इसे ही यहां के लोग 'असली बाजार; कहते थे। यहां प्रत्येक शनिवार को बाजार लगता था और ऐसे ही एक बाजार वाले दिन चौरी–चौरा की घटना हुई थी।

इन बाजारों में चौरा बाजार बड़की डुमरी के जमींदार सरदार उमराव सिंह के क्षेत्र में आता था और मुण्डेरा बाजार बिशेनपुरा के जमींदार संत बक्स सिंह के क्षेत्र में। ये जमींदार अपने क्षेत्र के बाजारों में दुकान लगाने वालों पर कर लगाया करते थे तथा बाजार में किसी भी किस्म की अशांति या अव्यवस्था पैदा करने वालों से बड़ी सख्ती से निपटते थे। इस कार्य में उनका साथ देते थे चौरा थाना के सिपाही व

दरोगा जो इन प्रभावशाली लोगों के काम आना अपना फर्ज समझते थे।

सामाजिक–राजनीतिक परिवर्तन

अब सामाजिक और राजनैतिक परिक्षेत्र में हो रहे परिवर्तनों को देखते हैं। पूर्वी उत्तर प्रदेश के सारे जिले और विशेष रूप से गोरखपुर जिला बहुत ही पिछड़ा इलाका था। लेकिन 20वीं सदी की शुरुआत से कुछ सामाजिक और धार्मिक संगठनों ने इस इलाके में काम करना शुरू कर दिया था। इन संगठनों में कुछ प्रमुख थे– गौरक्षिणी सभा, सेवा समिति, ग्राम हितकारिणी सभा और ग्राम सुधारक सभा। हालांकि इनका कार्यक्षेत्र विशेष रूप से धर्म और समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना था मगर इन्होंने अपने कार्यों के संदर्भ में लोगों को देश में हो रही अन्य गतिविधियों से भी अवगत कराया। इस तरह 1920 तक आते–आते लोगों में थोड़ी बहुत राजनैतिक चेतना भी आने लगी थी। बहुत सारी जाति सभाएं जो अभी तक केवल जाति सुधार तक सीमित थीं। अब राजनैतिक मामले भी उठाने लगी थीं। उदाहरण के लिए दिसंबर 1920 में गोरखपुर की एक तहसील में 'भूमिहार रामलीला मंडल' की स्थापना हुई जिसका उद्देश्य था ग्रामीण समाज में एकता स्थापित करना तथा भगवान राम का बखान करते हुए सत्याग्रह का प्रचार।

इसी तरह बहुत सारे मामलों में नीची समझी जाने वाली जातियों की पंचायतों ने भी अपने खाने–पीने पर तथा काम–काज के तरीकों पर रोक लगाना शुरू कर दिया, जैसे उनकी औरतें अब जमींदारों के घर में काम करने नहीं जाएंगी या मर्द लोग जमींदारों के यहां बेगार नहीं करेंगे। उदाहरण के लिए गोरखपुर से निकलने वाला एक हिन्दी अखबार स्वदेश 6 फरवरी 1921 को लिखता है कि बस्ती के मेहतरों, धोबियों और नाइयों ने 27 जनवरी 1921 को अपनी–अपनी बिरादरी की पंचायतों में यह फैसला किया कि अगर उनमें से कोई मांस, मछली या शराब का सेवन करेगा तो बिरादरी उसे सजा देगी और साथ ही उसे 51 रुपए गौशाला के लिए चंदा देना पड़ेगा। उन्होंने यह भी फैसला किया कि वे उन सभी जजमानों के यहां भी काम नहीं करेंगे जो इन चीजों का सेवन करते हैं। इन पंचायतों में हुए फैसलों का बड़ी कड़ाई से पालन किया जाता था। सामाजिक रूप से अशुद्ध समझी जाने वाली इन जातियों की इस प्रकार अपने आप को 'शुद्ध' करने की यह कोशिश एक प्रकार से उनकी अपनी पराधीनता को नकारने की प्रक्रिया दिखती है।

गांधी बाबा के चमत्कार

1920 के बाद गोरखपुर जिले के गांवों में 'गांधी पंचायत' भी काफी देखने को मिलने लगी थी। ये पंचायत न केवल एक बिरादरी की बल्कि पूरे गांव की एक बिरादरी होती थी और इनके मुद्दे भी ज्यादा व्यापक होते थे।

1921 के बाद इसके साथ एक और खास बात जुड़ गई। वह यह कि इन पंचायतों द्वारा अपराधी करार दिए गए व्यक्तियों को अगर किसी भी कारण किसी किस्म का कष्ट या मानसिक पीड़ा होती थी तो उसे 'गांधी बाबा' का चमत्कार समझा जाने लगा– कि 'गांधी बाबा' उसे उसकी करनी की सजा दे रहे हैं। इतना ही नहीं उन दिनों गांवों में कुछ भी अनहोनी या आश्चर्यजनक घटना होती थी तो उसे गांधीजी का चमत्कार मान लिया जाता था और उसकी चर्चा स्थानीय अखबारों तक में होती थी। उदाहरण के लिए मार्च 1921 के एक अंक में स्वदेश अखबार ने ऐसी चमत्कारिक घटनाओं का जिक्र किया है। एक गांव में लोगों ने देखा कि अचानक सभी कुंओं से धुआं निकलने लगा है, जब उन्होंने उनका पानी पीकर देखा तो उससे केवड़े की खुशबू आ रही थी। किसी दूसरे गांव में एक घर करीब एक वर्ष से बंद पड़ा था। जब उसे खोला गया तो उसमें पवित्र कुरान की एक प्रति रखी मिली। एक जगह एक अहीर ने एक साधु को, जो गांधीजी के नाम पर भिक्षा मांग रहा था, भिक्षा देने इंकार कर दिया तो उसका सारा गुड़ और दो बैल आग में जलकर खत्म हो गए और एक ब्राह्मण गांधी जी की प्रभुता स्वीकार न करने के कारण पागल हो गया और तभी ठीक हो सका जब उसने गांधीजी के नाम का जाप शुरू कर

> गांधी पंचायतों द्वारा अपराधी करार दिए गए व्यक्तियों को अगर किसी भी कारण किसी किस्म का कष्ट या मानसिक पीड़ा होती थी तो उसे 'गांधी बाबा' का चमत्कार समझा जाने लगा– कि 'गांधी बाबा' उसे उसकी करनी की सजा दे रहे हैं।

दिया। इस किस्म की पचासों कहानियां उन दिनों गोरखपुर के गांवों में प्रचलित थी। इनमें कितनी सच्चाई थी ये तो कोई भी समझ सकता है मगर इन अफवाहों का गांवों की जनता पर बड़ा असर पड़ता था। कांग्रेस के स्थानीय नेताओं को भी इससे ग्रामीण जनता को गांधीजी के नाम पर संगठित करने में काफी मदद मिली। अब वे किसी सभा का भी आयोजन करते थे, तो उसे 'गांधी सभा' का नाम दे देते थे और उसमें अपने आप काफी भीड़ जमा हो जाती।

मगर इन कहानियों या अफवाहों और गांधीजी के बढ़ते प्रभाव के कारण इस इलाके के जमींदार लोग काफी परेशान थे। सर्वप्रथम तो इसने इन ग्रामीण इलाकों में एकता बनाई थी जिसके कारण लोग जमींदारों की हुक्मउदूली ही नहीं बल्कि उनके अधिकार क्षेत्र पर हमला भी करने लगे थे।

गोरखपुर से प्रकाशित जमींदारों के पक्षधर अखबार 'ज्ञान शक्ति' ने अप्रैल 1921 में लिखा कि सभी गांवों में रात के समय लोग ढोल, ताशा और मंजीरा लेकर निकलते हैं और कम से कम पांच गांवों में घूम–घूमकर गांधी जी के गीत गाते हैं और नारेबाजी करते हैं। इस काम को वे 'स्वराज का डंका' बजाना कहते हैं और अपनी यात्रा के दौरान लोगों को बताते हैं कि अंग्रेजों ने गांधी जी से यह शर्त लगाई थी कि अगर वो आग से बिना जले निकल कर दिखा दें तो उन्हें स्वराज मिल जाएगा। गांधी जी ने एक बछड़े की पूंछ पकड़कर बिना जले आग को पार कर लिया, इसलिए अब स्वराज आ गया है। गांधीजी के स्वराज में केवल चार आना और आठ आना प्रति बीघा की दर से लगान लगेगा। अतः कोई भी व्यक्ति इससे ज्यादा लगान जमींदारों को न दे। ज्ञान शक्ति अखबार ने आगे चिंता जताई कि ऐसी हरकतों से स्वराज आने में देरी होगी और 'देश' का बड़ा नुकसान होगा।

हालांकि ये सारी बातें कांग्रेस के स्थापित विचारों और कार्यक्रमों के विपरीत थीं, मगर फिर भी कांग्रेस नेतृत्व इन ग्रामीणों को स्वराज पाने की स्थिति में अपने लिए, एक आदर्श शासन की कल्पना करने से रोक नहीं पाया। इन ग्रामीणों के लिए शासन या दमन के स्थापित प्रतिनिधियों को उखाड़ फेंकना ही स्वराज था।

उदाहरण के तौर पर चौरी–चौरा थाने के थानेदार के घर के नौकर सरजू कहार ने बाद में मुकदमें के दौरान कोर्ट को यह बताया था कि घटना के दो–चार दिन पहले उसने लोगों को यह कहते हुए सुना था कि –'गांधी महात्मा का स्वराज आ गया है और अब चौरा थाने को बंद कर दिया जाएगा। उसकी जगह वालेंटियर (स्वयंसेवक) लोग अपना थाना खोलेंगे।' इसके अतिरिक्त मांग पट्टी गांव के हरवंश कुर्मी ने यह बताया कि उसके गांव के नारायण, बालेश्वर और चमरू ने उस घटना के बाद उसे बताया कि उन लोगों ने चौरा थाने को जला दिया है और अब स्वराज आ गया है।' ऐसा ही बयान उसी गांव के फेंकू चमार ने भी कोर्ट में दिया था।

गांधी जी गोरखपुर में

ऐसे ही आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक माहौल में 8 फरवरी 1921 को गांधीजी ने गोरखपुर का दौरा किया। अखबार 'स्वदेश' के अनुसार 'गांधी जी जिस ट्रेन से गोरखपुर आ रहे थे वो हर स्टेशन पर रुकती थी जहां हजारों की संख्या में लोग उनके दर्शन को खड़े रहते थे। ये लोग न केवल गांधी जी के दर्शन करना चाहते थे बल्कि उन्हें कुछ भेंट (रुपए, पैसे आदि) भी देना चाहते थे। मगर उन्हें कहा जा रहा था कि वो ये भेंट गोरखपुर में दें। चौरी–चौरा स्टेशन पर एक व्यक्ति उन्हें कुछ देने में सफल हो गया। उसके बाद तो लोगों को रोकना मुश्किल था। वहीं प्लेटफार्म पर एक चादर बिछा दी गई जिस पर लोगों ने रुपए–पैसों की बरसात कर दी।'' किसी ने भी यह नहीं सोचा था कि चौरी–चौरा जैसे साधारण स्टेशन से इस कदर पैसे इकट्ठे होंगे।

गोरखपुर में गांधीजी की सभा में करीब 2.5 लाख लोग उपस्थित थे जिनमें बहुत सारे चौरा थाना के आसपास के गांवों के भी थे। गांधी जी ने अपने भाषण में अंग्रेजी शासन से असहयोग करने के अलावा छह अन्य मुख्य बातों पर जोर दिया–

1. हिन्दू–मुस्लिम एकता।
2. लोगों को क्या नही करना है– लाठी का प्रयोग, हाट–बाजार की लूट, सामाजिक बहिष्कार।
3. अपने अनुयायियों से यह अपेक्षा कि वे जुआ खेलना छोड़ देंगे, गांजा–शराब नहीं पीएंगे, वेश्याओं के पास नहीं जाएंगे।
4. वकील और मुख्तार अपनी प्रेक्टिस छोड़ देंगे, सरकारी स्कूलों का बायकाट किया जाए, सरकारी उपाधियां छोड़ दी जाएं।
5. लोग सूत कातना शुरू करें और बुनकर सिर्फ हाथ का बना सूत ही लें।
6. स्वराज का मिलना हमारी संख्या, आंतरिक मजबूती, भगवान का आशीर्वाद, शांति, त्याग आदि पर निर्भर है।

गांधी जी की गोरखपुर यात्रा ने वहां एक ऐसी राजनैतिक चेतना को जन्म दिया जिसने शताब्दियों से अक्षुण्ण रहे शक्ति संबंधों जैसे अंग्रेज–हिन्दुस्तानी, जमींदार–किसान, ऊंची जाति–नीची जाति आदि को पलटना शुरू कर दिया।

ऐसी ही बातें गांधी जी उत्तर प्रदेश और बिहार की अन्य सभाओं में भी कहते आ रहे थे। दरअसल इस आंदोलन के दौरान कई जगहों पर लूटमार और आगजनी की घटनाएं हो चुकी थी। मिसाल के तौर पर बिहार के दरभंगा, मुजफ्फरपुर और संयुक्त प्रांत (उत्तर प्रदेश) के रायबरेली, सुल्तानपुर, फैजाबाद आदि जिलों में कई स्थानों पर हाट–बजार लूट लिए गए थे और सरकारी संपत्ति को नुकसान पहुंचाया गया था। ऐसी घटनाओं को रोकने के लिए ही गांधी जी अपनी सभाओं में ऐसी बातों पर जोर देते थे। इनका लोगों पर दरअसल कितना असर हुआ, वो आगे की घटनाओं से ही पता चलता है।

गांधी जी की गोरखपुर यात्रा ने वहां के राजनैतिक जीवन में एक नई जान, एक नया उत्साह भर दिया। 13 फरवरी 1921 को स्वदेश में छपी एक कविता देखें:

जान डालेगा यहां आप का आना अब तो,
लोग देखेंगे कि बदला है जमाना अब तो।
आप आए हैं यहां जान ही आयी समझो,
गोया गोरख ने धूनी फिर है रमायी समझो।

उनके आने का उत्साह, उनके आने से जगी उम्मीदें तथा उनके द्वारा किए गए अंग्रेजी शासन पर प्रहार ने वहां स्थानीय स्तर पर हो रहे परिवर्तनों के साथ मिलकर एक ऐसा माहौल पैदा कर दिया था जिससे वहां की साधारण जनता के जीवन पर बड़ा फर्क पड़ा। गांधी जी की यात्रा ने वहां एक ऐसी राजनैतिक चेतना को जन्म दिया जिसने शताब्दियों से अक्षुण्ण रहे शक्ति संबंधों जैसे अंग्रेज–हिन्दुस्तानी, जमींदार–किसान, ऊंची जाति – नीची जाति आदि को पलटना शुरू कर दिया।

घटना की पृष्ठभूमि

जनवरी 1921 में मध्य में ही चौरा थाना से एक मील की दूरी पर स्थित छोटकी डुमरी गांव में कांग्रेस वालंटियरों के एक मण्डल (ग्रामीण इकाई) की स्थापना हो चुकी थी, वालंटियरों की भर्ती में बहुत तेजी नहीं आई थी। असहयोग आंदोलन को मुसलमानों के खिलाफत आंदोलन के साथ मिला देने का गांधी जी का निर्णय यहां संगठनात्मक रूप से काफी महत्वपूर्ण साबित हुआ। अब बड़ी संख्या में मुसलमान इस राष्ट्रीय आंदोलन में शामिल होने लगे।

जनवरी 1922 में चौरा के लाल मुहम्मद सांई ने गोरखपुर कांग्रेस खिलाफत कमेटी के एक कार्यकर्ता हकीम आरिफ को डुमरी मण्डल के लोगों को संबोधित करने के लिए बुलाया। हकीम आरिफ ने लोगों से कहा कि वे रुई की खेती करें, उसका सूत कातें और उससे बने कपड़े पहनें। उन्होंने लोगों से आपस के झगड़े आपस में ही सुलझा लेने को कहा और थाना या जमींदार के पास जाने से मना किया। उन्होंने ताड़ी या शराब पीने को भी मना किया और यह भी कहा कि स्वराज मिल जाने के बाद लोगों को केवल चार और आठ आना प्रति बीघे की दर से लगान देना पड़ेगा। हकीम आरिफ ने डुमरी मंडल के लिए कुछ पदाधिकारियों की भी नियुक्ति की। लाल मुहम्मद सांई को सचिव नियुक्त किया गया, भगवान बनिया को उपसचिव तथा खजांची, मीर शिकारी को संयुक्त सचिव और नजर अली को उप संयुक्त सचिव नियुक्त किया। उसके बाद वे सभी कार्यकर्ताओं को 'चंदा' और 'चुटकी' जमा करते रहने का आदेश देकर चले गए। ('चंदा' तो आज भी काफी प्रचलित तरीका है पैसे जमा करने का, मगर 'चुटकी' का चलन अब नहीं है। स्वतंत्रता आंदोलन के समय गांधीजी ने सभी देशवासियों को यह सलाह दी थी कि वे अपने रोज के खाने के अनाज में से एक मुट्ठी अनाज देश के लिए निकालें। इसे कांग्रेस के स्वयंसेवक घर–घर घूमकर इकट्ठा करते थे। इसे ही 'चुटकी' कहते थे। इस तरह जमा किया गया अनाज आंदोलन के समय स्वयं सेवकों के काम आता था)।

हकीम आरिफ के जाने के अगले दिन से स्वयंसेवक बनाने का काम शुरू कर दिया गया। सरकारी गवाह मीर शिकारी के अनुसार, ''दूसरे ही दिन उसने 8–9 लोगों को वालंटियर बनाया जिनमें चिंगी तेली, बिहारी पासी, फेंकू पासी, सुखदेव पासी, बिन्देश्वरी सैन्थवारी, जंगी अहीर, दुधई चमार आदि शामिल थे।'' इस काम में उसका साथ 10–12 वर्ष के लड़के

नकछेद ने। नकछेद स्कूल जाने वाला लड़का था और शिकारी ने उसे अपने साथ इसलिए रखा कि वह खुद अनपढ़ था और 'प्रतिज्ञा पत्र' भरने का काम नहीं कर सकता था। वालंटियर बनाने के अलावा दूसरा महत्वपूर्ण काम जो इन कार्यकर्ताओं ने अपने हाथ में लिया वो था मांस, मछली, शराब और विदेशी वस्त्रों की दुकानों पर पिकेटिंग करने का। 4 फरवरी 1922 को हुई पुलिस से मुठभेड़ इसी कार्य की परिणिति थी।

4 फरवरी की घटना से करीब 10–12 दिन पहले डुमरी मण्डल के 30–35 वालंटियरों ने मुण्डेरा बाजार में पिकेटिंग की। पिकेटिंग के दौरान उनका ज्यादा ध्यान मांस और मछली बेचने वालों की दुकानों पर था। इसलिए नहीं कि इनकी बिक्री रोकना कांग्रेस के कार्यक्रम में था बल्कि इसलिए कि 'दुकानदार मांस, मछली मंहगी बेच रहे थे' और वो चाहते थे कि उसकी कीमत कम हो। थोड़ी ही देर की पिकेटिंग के बाद बाजार के मालिक संत बक्स सिंह के एक कारिंदे ने उन्हें पिकेटिंग बंद कर बाजार से जाने को कह दिया और उन्हें जाना पड़ा। इस बार की असफलता के बाद वालंटियरों ने यह फैसला किया कि अगली बार वे ज्यादा संख्या में आएंगे और कारिंदे की बात नहीं मानेंगे।

इस समय तक वालंटियरों की संख्या 300 से ज्यादा तक पहुंच चुकी थी और उनका शारीरिक प्रशिक्षण (ड्रिल आदि) भी शुरू हो चुका था। प्रशिक्षण की जिम्मेदारी ली थी एक रिटायर्ड फौजी भगवान अहीर ने। भगवान अहीर प्रथम विश्वयुद्ध में अंग्रेजों की तरफ से इराक में लड़ा था और कवायद करना–कराना जानता था।

मुख्य घटना से करीब चार दिन पहले कांग्रेस कार्यकर्त्ताओं ने डुमरी में एक बड़ी सभा की। सभी वालंटियरों को यह निर्देश दिया गया कि अपने साथ काफी लोगों को लेकर आएं–

''अन्यथा भीड़ कम होने पर पुलिस उनकी पिटाई कर सकती है या उन्हें गिरफ्तार कर सकती है।'' अब उन्हें भीड़ की शक्ति का अंदाजा हो चुका था। शायद उन्हें संयुक्त प्रांत के अवध क्षेत्र के जिलों (रायबरेली, सुल्तानपुर, फैजाबाद, बाराबंकी आदि) में चल रहे किसान आंदोलनों की जानकारी होगी जहां कई हजारों किसानों की भीड़ ने जुलूस और धरने आदि के द्वारा सरकारी कर्मचारियों को झुकने पर मजबूर कर दिया था।

उक्त सभा में करीब 4000 लोग उपस्थित थे। गोरखपुर से आए कुछ नेताओं ने अपने भाषण में गांधीजी और मुहम्मद अली का गुणगान किया और लोगों से उनकी बताई राह पर चलने का आग्रह किया। सभा के बाद एक बड़े से चरखे के साथ जुलूस निकाला गया जो तहसील दफ्तर, थाना और बाजार में घूमा। किसी ने उन्हें रोकने–टोकने की कोशिश नहीं की। इस सभा और जुलूस की सफलता से उत्साहित होकर डुमरी के कार्यकर्त्ताओं ने दूसरे दिन यानी 1 फरवरी, बुधवार को फिर से मुण्डेरा बाजार में पिकेटिंग करना तय किया।

उस दिन करीब 60–65 वालंटियर नजर अली, लाल मुहम्मद सांई और मीर शिकारी के नेतृत्व में मुण्डेरा बाजार पहुंचे। मगर बाजार के अन्दर जाने से पहले ही संत बक्स सिंह के आदमियों ने उन्हें डांट–डपट कर भगा दिया। फिर भी वहां से वापस जाने से पहले इन कार्यकर्ताओं ने उन कारिंदों को यह चेतावनी दे डाली कि शनिवार को वे और ज्यादा लोगों के साथ आएंगे और तब उनसे बात करेंगे।

उसी दिन शाम को आगे का कार्यक्रम तय करने के लिए मीर शिकारी के घर पर एक मीटिंग बुलाई गई। मीटिंग शुरू ही हुई थी कि भगवान अहीर, रामरूप बरई और महादेव आए और बताया कि जब वे बाजार में अकेले ही पिकेटिंग कर रहे थे तो दरोगा गुप्तेश्वर सिंह ने उनकी काफी पिटाई की। इस घटना ने आग पर घी का काम किया और सभी ने यह फैसला किया कि दूसरे वालंटियर मण्डलों को चिट्ठी लिखकर बुलाया जाए और सबके साथ जाकर दरोगा से पूछताछ की जाए कि उसने उनके आदमियों की पिटाई क्यों की। उन सबके मन में यह संकल्प था कि जिस प्रकार दरोगा ने उनकी पिटाई की है उसी प्रकार दरोगा की भी पिटाई होनी चाहिए।

दूसरे दिन फिर से नकछेद की सहायता ली गई और विभिन्न

मण्डलों के लिए पांच चिट्ठियां लिखवाई गई। सारी बातें बताने के बाद उन सभी से यह आग्रह किया गया कि वे शनिवार की सुबह डुमरी में बिहारी पासी के घर के सामने खलिहान में कम से 100–150 लोगों के साथ जमा हों। फिर उस सभा के लिए तैयारियां की गई। लोगों के लिए गुड़–पानी का इंतजाम किया गया, बैठने के लिए बोरे और नेताओं के स्वागत के लिए फूल–मालाएं भी मंगवाई गई।

शनिवार यानी चार फरवरी को सुबह आठ बजे ही 800 से ज्यादा लोग खलिहान में जमा हो चुके थे। मीटिंग शुरू हो गई और इस बात पर गर्मागरम बहस शुरू हो गई कि बदला कैसे लिया जाए। इधर दरोगा गुप्तेश्वर सिंह भी बेखबर नहीं था। उसे अपने मुखबिरों से यह खबर मिल चुकी थी कि मीटिंग में कुछ खास फैसले लिए जा सकते है। इसलिए उसने गोरखपुर से अतिरिक्त पुलिस बल के रूप में 'बंदूकधारी सिपाही' बुला लिए थे। उसने मीटिंग में लोगों को कोई आक्रमक फैसला लेने से रोकने के लिए अपने कुछ आदमियों को भी भेजा। मगर लोगों ने उनकी एक न सुनी और यह फैसला किया कि वे दरोगा को जवाब तलब करेंगे और मुण्डेरा बाजार भी बंद कराएंगे। इस कार्य में आने वाले खतरों को झेलने के लिए सभी लोग तैयार थे। सभी ने अपनी मां–बहनों के नाम की कसमें खाई कि वे पुलिस द्वारा गोली चलाने पर भी नहीं भागेंगे।

इसके बाद सभा ने एक जुलूस का रूप ले लिया जो 'महात्मा गांधी की जय' आदि नारे लगाते हुए चौरा थाने की ओर चल पड़ा। भोपा बाजार तक पहुंचते–पहुंचते उनकी संख्या ढाई से तीन हजार तक पहुंच चुकी थी। भोपा बाजार में उन्हें संत बक्स सिंह का कारिंदा (अवधु तिवारी) मिला जिसने उन्हें पिछली बार भगाया था। उसने इस बार उन्हें पुलिस की बंदूकों का डर दिखाया, मगर जुलूस के नेताओं ने उस पर ध्यान नहीं दिया। थोड़ा आगे जाने पर उन्हें दरोगा अपने बंदूकधारी सिपाहियों और चौकीदारों के साथ खड़ा दिखा। नेतागण पहले तो थोड़ा भयभीत हुए मगर इस हिम्मत से आगे बढ़ते रहे कि उनकी संख्या इतनी ज्यादा है कि दरोगा कुछ नहीं कहेगा। इस जगह पर बीच–बचाव किया हरचरण सिंह ने। वह जमींदार सरदार उमराव सिंह का मैनेजर था। उसने जुलूस के नेताओं से बातचीत की और जब नेताओं ने उसे आश्वासन दिया कि वे शांतिपूर्वक मुण्डेरा बाजार चले जाएंगे तो दरोगा और सिपाहियों को रास्ते से हटा लिया। विजयी जुलूस आगे बढ़ता रहा और बहुत से लोग जो भोपा और मुण्डेरा में साप्ताहिक बाजार करने आए थे, उसमें शामिल होते गए।

जब जुलूस थाने के सामने वाली सड़क पर पहुंचा तो एक बार फिर पुलिस से सामना हुआ। यहां दारोगा गुप्तेश्वर सिंह ने जुलूस के नेताओं लाल मुहम्मद सांई, नज़र अली, शाम सुंदर, मीर शिकारी, रामरूप आदि से बातचीत करनी चाही। भीड़ ने इसे अपनी आखिरी विजय माना और जोर–जोर से तालियां बजाकर पुलिस वालों का मजाक उड़ाने लगे। जिससे बौखलाकर कुछ पुलिस वालों ने लाठियां चलाना शुरू कर दिया जिसका जवाब भीड़ ने पथराव से दिया। पास ही में रेलवे लाइन थी जिससे उन्हें पत्थर ढूंढने भी नहीं पड़े। तब पुलिस वालों ने चेतावनी के तौर पर हवा में गोलियां चलाई, मगर जब कोई घायल नहीं हुआ तो ये अफवाह उड़ी की ''गांधी जी के प्रताप से गोलियां पानी हो गई हैं।''

इससे भीड़ का मनोबल और बढ़ गया और पथराव भी तेज हो गया। इसके बाद पुलिस वालों ने सही में 'फायरिंग' की जिससे तीन लोग मारे गए और कई घायल हो गए। मगर इससे भीड़ शांत होने की जगह और आक्रामक हो गई। पुलिस वालों के पास गोलियां कम थीं और पथराव बदस्तूर जारी था, तो इससे बचने के लिए उन्होंने थाने में शरण ली। तब भीड़ ने थाने को घेर लिया और दरवाजों–खिड़कियों को तोड़ना शुरू कर दिया। इसी बीच कुछ लोग पास के डिपो से मिट्टी का तेल ले आए और उसे छिड़क कर थाने में आग लगा दी।

आग से घबराकर कुछ पुलिस वालों ने, जिनमें दारोगा जी भी शामिल थे, बाहर निकलने की कोशिश की मगर भीड़ ने लात–घूसों और डण्डों से मार–मार कर उनकी जान ले ली। इस घटना में कुल मिलाकर 23 पुलिस वालों की जाने गई,

उस दिन सरकार या शासन से संबंधित हर चीज़ नष्ट कर दी गई और शाम होने पर जब लोग अपने गांवों को लौटे तो उन्हें यह विश्वास था कि उन्होंने सरकार को उखाड़ फेंका है और अब स्वराज आ गया है।

मगर भीड़ इतने पर ही शांत नहीं हुई। थाने के बाद दारोगा के घर का नंबर आया। घर में रखे अनाज, कपड़े और अन्य कीमती सामान लूट लिए गए। यहां तक कि दारोगा की पत्नी और बेटियों के गहने भी छीन लिए गए और घर में भी आग लगा दी गई।

लूटपाट का यह दौर काफी देर तक चलता रहा। पहले मुण्डेरा बाजार में, फिर रेलवे स्टेशन और पोस्ट व टेलिग्राफ ऑफिस में। रेलवे स्टेशन के दोनों तरफ करीब एक मील तक रेलवे लाइन उखाड़ दी गई और टेलिग्राफ के तार काट दिए गए। सरकार या शासन से संबंधित हर चीज को नष्ट कर दी गई और शाम होने पर जब लोग अपने गांवों को लौटे तो उन्हें यह विश्वास था कि उन्होंने सरकार को उखाड़ फेंका है और अब स्वराज आ गया है। मगर उनके अंदर एक डर भी था कि पुलिस इसका बदला जरूर लेगी और इसी डर से वे अपने गांवों को लौटने की बजाए अपने दूर–दराज के रिश्तेदारों के यहां भाग गए।

जवाबी कार्रवाई

पुलिस की जवाबी कार्रवाई काफी तेज रही। दूसरे दिन सुबह–सुबह छोटकी डुमरी में पुलिस ने छापा मारा मगर कोई भी नेता उनके हाथ नहीं आया। तब वालंटियरों के नाम और उनके खिलाफ सबूत जुटाने का काम शुरू हुआ। उसी दिन गोरखपुर के सदर कोतवाल ने कांग्रेस–खिलाफत कमेटी के दफ्तर पर छापा मारा और सारे कागजात जब्त कर लिए। उन्हीं कागजातों में डुमरी मण्डल के वालंटियरों के 'प्रतिज्ञा पत्र' भी थे जिनके आधार पर पुलिस ने गिरफ्तारियां की। महीने भर के अंदर लगभग सारे प्रमुख वालंटियर पकड़े गए।

पुलिस रिपोर्टों के अनुसार इस दंगे में करीब 6000 लोग शामिल थे जिनमें से एक हजार से पूछताछ की गई और आखिर में 225 पर मुकदमा चलाया गया। वालंटियरों का एक प्रमुख नेता मीर शिकारी सरकारी गवाह बन गया और उसके बयान के आधार पर गोरखपुर के डिस्ट्रिक्ट जज एच.ई. होम्स ने 9 जनवरी, 1923 को 172 लोगों को फांसी की सजा सुनाई और 50 को बरी कर दिया (3 की मौत मुकदमे की सुनवाई के दौरान हो गई थी) मगर इलाहाबाद हाई कोर्ट ने अपने 30 अप्रैल, 1923 के फैसले में 110 लोगों की फांसी की सजा को आजीवन कारावास में बदल दिया, 38 को बरी कर दिया और केवल 19 की फांसी की सजा को बहाल रखा।

दंगे के तुरंत बाद पुलिस की ही तरह गोरखपुर कांग्रेस खिलाफत कमेटी के लोग भी हरकत में आए। उन्होंने एक आपात बैठक बुलाई और चौरा थाना के आसपास के गांवों के वालंटियर मण्डलों को भंग कर दिया और अपने आपको इस घटना से बिल्कुल अलग कर लिया। इधर गांधी जी ने अपने बेटे देवदास गांधी को अपने विशेष दूत के रूप में घटना की पूरी जानकारी के लिए चौरी–चौरा भेजा। मगर प्रशासन ने उन्हें चौरी–चौरा जाने से रोक दिया।

12 फरवरी, 1922 को गांधी जी ने असहयोग आंदोलन वापसी की घोषणा कर दी। दरअसल पिछले कुछ महीनों से देश के बाकी हिस्सों में आंदोलन ठंडा पड़ता जा रहा था और ऐसी स्थिति में जब कि गांधी जी ने देश को एक वर्ष के अंदर स्वराज दिलाने का वादा कर रखा था और स्वराज मिलने के कोई आसार दिखाई नहीं पड़ रहे थे, इस आंदोलन को वापस लेने का इससे अच्छा अवसर और कोई नहीं हो सकता था। मगर 16 फरवरी 1922 को लिखे अपने लेख 'चौरी–चौरा का अपराध' में गांधी जी ने आंदोलन को वापस लेने का कारण देश का किसी भी अहिंसक आंदोलन छेड़ने के लिए तैयार न होना बताया। उनके अनुसार अगर ये आंदोलन वापस न लिया जाता तो दूसरी जगहों पर भी ऐसी घटनाएं होती।

गांधी जी ने अपने लेख में एक ओर तो इस घटना के लिए पुलिस वालों को जिम्मेदार ठहराया क्योंकि ''उनके ही उकसाने पर भीड़ ने ऐसा कदम उठाया था।'' दूसरी तरफ इस घटना में शामिल तमाम लोगों को अपने आपको पुलिस के हवाले करने की सलाह दी– क्योंकि उन्होंने अपराध किया था।

उधर गोरखपुर में बैठे देवदास गांधी ने मृत पुलिस वालों के परिवारों की सहायता के लिए एक 'चौरी–चौरा सहायता कोष' की स्थापना की और संयुक्त प्रांत (यू.पी.) की तमाम जिला कांग्रेस कमेटियों को आदेश दिया कि इस कोष के लिए दो–दो हजार रुपए जमा करें। गोरखपुर जिले को सजा स्वरूप दस हजार रुपए जमा करने थे। इस सहायता कोष से मृत या सजायाफ्ता वालंटियरों के परिवार वालों को कुछ भी नहीं मिलना था क्योंकि 'उन्होंने अपराध किया था।'

आंदोलन के प्रणेता होने के कारण थोड़ा बहुत दायित्व गांधी जी का भी था, जिसने उन्होंने स्वीकारा भी और इसके प्रायश्चित के लिए पांच दिनों का उपवास रखा। लेकिन चौरी–चौरा कांड के सजायाफ्ता वालंटियरों के परिवार वालों का भूल सुधार तो सारी जिंदगी चलता रहा।

(लेखक अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन से जुड़े हैं)

साभार – सन्दर्भ